ॐ

राम संदेश

भक्ति, ज्ञान एवं कर्मयोग की आध्यात्मिक पत्रिका

पावन हों शिक्षा संस्कार
शुद्ध आचरण का आधार

काम काज हो या व्यापार
सभी जगह अच्छा व्यवहार

मित्र पड़ोसी घर परिवार
संबंधों में निश्छल प्यार

यदि हो पाएं तो संसार में
होगा सुख शांति प्रसार

वर्ष 64 अक्तूबर-दिसम्बर 2016 अंक 4

रामाश्रम सत्संग, गाज़ियाबाद

विषय सूची

क्रमांक		पृष्ठ
1.	भजन *दादू दयाल*	01
2.	श्रीमद्भगवद्गीता की व्याख्या *लालाजी महाराज*	02
3.	अभ्यास क्यों किया जाता है *डॉ. श्रीकृष्ण लाल जी महाराज*	07
4.	साधन *अनमोल वचन*	11
5.	नियमित साधना का महत्व *परमसंत डॉ. करतार सिंह जी साहब*	14
6.	नई कार्यसमिति 16-17 की घोषणा	19
7.	घोषणा शिक्षक वर्ग 16-17	21
8.	अहमद हर्व्व *प्राचीन मुस्लिम संतों के जीवन चरित्र*	23
9.	सबसे बड़े जादूगर का करतब *प्रेरक प्रसंग*	26

राम ॐ संदेश

संस्थापक

ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. श्रीकृष्ण लाल जी महाराज

संरक्षक

ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी

सम्पादक

डॉ. शक्ति कुमार सक्सेना

(सर्वोच्च आचार्य एवं अध्यक्ष)

वर्ष 64 अक्तूबर–दिसम्बर 2016 अंक–4

भजन

क्या मुँह लै बोलिये, दादू दीजै रोय।
जनम अमोलक आपना, चले अकारथ खोय।।

जे सिर सौंप्या राम कौं, सो सिर भया सनाथ।
दादू दै उरिण भया, जिसका तिसके हाथ।।

सुख का साथी जगत सब, दुख का नाहीं कोय।
दुख का साथी साइयाँ, दादू सत्गुरु होय।।

– दादू दयाल

परमसंत महात्मा रामचन्द्र जी महाराज

श्रीमद्भगवद्गीता की व्याख्या

(पिछले अंक से आगे)

27

बन्धु रात्मात्मनस्तस्य येनात्मैवात्मना जितः।
अनातमनस्तु शत्रुत्वे वर्तेतात्मैव शत्रुवत्।। 6 ।6।

अर्थः– जिसने आत्मा द्वारा मन आदि को जीत लिया हो तो वही स्वयं उसका मित्र है और यदि न जीत पाया हो तो वही सबसे बड़ा शत्रु है।

भावार्थः– संसार में आत्मजित (जिसने आत्मा को जीत लिया हो) स्वयं ही आत्मा का मित्र है। यदि इस स्वयं (हम को) आत्म ज्ञान प्राप्त हो गया है। नहीं तो अनात्मजित को सर्वदा संशयों, अपरिपक्वता से जगत में विवादों का सामना करना पड़ता है। जो शत्रुवत व्यवहार करते हैं।

28

तत्रैकाग्रं मनः कृत्वा यतचित्तेन्द्रिपक्रियाः।
उपविश्यासने युञ्ज्याद्योगमात्मविशुद्धये।। 6 ।12।

अर्थः– उस आसन पर बैठकर चित्त और इन्द्रियों को वश में करके (रोककर)मन को एकाग्र करके आत्मा की शुद्धि के लिए योग का अभ्यास करे।

भावार्थः– यहाँ ध्यान से पहले क्या करना चाहिए, बतलाया गया है कि आसन पर बैठकर चित्त और इन्द्रियों को शांत करके (यहाँ यम, नियम आसन धारणा बता दी) मन को एकाग्र करके आत्मा की शुद्धि के लिए योगाभ्यास करें।

29

समं कायशिरोग्रीवं धारयन्नचलं स्थिरः।
संप्रेक्ष्य नासिकाग्रं स्वं दिशश्चानवलोकयन्।। 6 ।13।

अर्थः– शरीर, सिर और गर्दन को समान करके (एक सीध में करके) बगैर हिले स्थिर होकर नासिका के अग्र भाग पर, अन्य दिशाओं पर न देखता हुआ दृष्टि जमाये।

भावार्थः– यह नासाग्राध्यान की क्रिया है। शरीर (रीढ़), सिर और गर्दन एक सीध में रखकर बगैर हिले अन्य सब तरफ से ध्यान हटाकर नासिका के अग्रभाग पर मन की दृष्टि जमाये (ध्यान केन्द्रित करना चाहिए)। ऐसे में आँखें आधी खुली रह सकती हैं।

30

यथा दीपो निवातस्थो नेगंते सोपमा स्मृता।
योगिनो यतचित्तस्य युञ्जतो योगमात्मनः।। 6 ।19।

अर्थः– जैसे वायु रहित स्थान पर दीपक की ज्वाला निश्चल रहती है वैसा योगी का चित्त परमात्मा के ध्यान में लगा रहता है।

भावार्थः– ध्यान में चित्त एकसुई उसी प्रकार लगा रहना चाहिए, जैसे वायु रहित स्थान पर स्थिर रूप से दीप की लौ जलती रहती है। इसी को अन्य स्थानों पर तैल धारा व्रत कहा है यानि जैसे लगातार तेल की धारा गिरती है उसी प्रकार ध्यान लगे।

31

यो मां पश्यति सर्वत्र सर्व च मयि पश्यति।
तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति। 6 ।30।

अर्थः– जो मुझे सबमें देखता है और सबको मुझमें देखता है उसके लिए मैं कभी नहीं मिट सकता और वो मेरे लिए कभी नहीं।

भावार्थः– ये विज्ञानमय कोष के विराट दर्शन की अवस्था है कि हर जीव, जड़, यानी चर और अचर वस्तु में मेरा दर्शन करें और उन सब वस्तुओं को मुझमें यानी मेरे स्वरूप में देखें उसके लिए न कभी मैं हट सकता हूँ (कम हो सकता हूँ) न वो मेरी दृष्टि से और कृपा से कभी ओझल हो सकता है। इसी को अणो आणीयान और महतो महीयान वाली अवस्था कहते हैं।

32

प्राप्य पुण्यंकृतां लोकानुषित्वाः शाश्वतीः समाः।
शुचीनां श्रीमतां गेहे योगभ्रष्टोऽभिजायते। 6। 49।।

अर्थः– योगभ्रष्ट पुरूष, पुण्यवानों के लोको में बहुत समय वास करके फिर शुद्ध आचरणों वाले श्रीमान पुरूषों के यहाँ जन्म लेता है।

भावार्थः– अर्जुन के इस प्रश्न कि यदि योगी संयम न धारण कर पाया और मृत्यु को प्राप्त हो गया तो वो कहीं का भी नहीं रहा। न दुनिया का हो सका न परमार्थ पा सका। उसके लिये भगवान समझाते हैं कि ऐसा व्यक्ति अनेक वर्षो तक ऊँचें लोकों में वास करके फिर पुण्य आत्माओं के यहाँ ही जन्म लेते है ताकि साधना जहाँ से छूटी वहीं से प्रारम्भ हो सके। अतः जो साधना की वह व्यर्थ नहीं जाती।

33

योगिनामपि सर्वेषां मद्गतेनान्तरात्मना।
श्रद्धावान्भजते यो मां य मे युक्ततमो मतः। 6। 49।।

अर्थः– सब योगियों में जो श्रद्धावान अर्न्तआत्मा से मुझमें लग कर मुझे ही भजता है वह मुझे परम मान्य है।

भावार्थः– योगियों में भी भगवान को सर्वोच्च वह लगता है जो तीन बातें करता है। यानी पूर्ण श्रद्धा रखे, अर्न्तआत्मा से भजे़ (बाहरी आडम्बर से नहीं) और मुझे ही भजे (अन्य सब को नहीं)।

34

मत्तः परतरं नान्यत्किंचिदस्ति धनंजय।
मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणा इवं। 7। 7।।

अर्थः– हे धनन्जय मुझसे अन्य कुछ भी नहीं है। यह सब कुछ (संसार) मणियों के समान मुझमें गुथा हुआ है।

भावार्थः– यहाँ प्रभु 'नान्येति तदेकं ब्रह्म' यानी उस एक ब्रह्म से अन्य कुछ भी नहीं है को कह रहे हैं कि मुझसे परे (अन्य) कुछ भी नहीं है। इस सब पसारे (जो दृश्य और अदृश्य है) में मैं डोरे के समान पिरोया

हुआ माला की मणियों के समान हूँ। ध्यान में जब कभी किसी और की ओर ध्यान जाये तो यह मंत्र 'ॐ नान्येति तदेकं ब्रह्म' कि 'उस एक ब्रह्म के सिवा कुछ भी नहीं है। जो कुछ दृश्य है उसी की रचना है।' से जल्दी वापस मन लग जाता है।

35

चतुर्विधा भजन्ते मां जनाः सुकृतिनोऽर्जुन।
आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ।। 7। 16।।

अर्थः– हे भरतवंश श्रेष्ठ अर्जुन मुझे भजने वाले भक्त (सुकर्मी) चार प्रकार के हैं। अर्थार्थी, आर्त, जिज्ञासु और ज्ञानी।

भावार्थः– भगवान ने अभ्यासियों के चार प्रकार बतलायें हैं। अर्थार्थी (किसी वस्तु की प्राप्ति की इच्छा रखने वाले), आर्त(संकट निवारण के लिये), जिज्ञासु (मुझे यथार्थ रूप से जानने की जिज्ञासा वाले), और ज्ञानी (जो सब तरह से आत्म ज्ञान प्राप्त करने में प्रयत्नशील हैं)।

36

तेषां ज्ञानी नित्ययुक्त एकभक्तिर्विशिष्यते।
प्रियो हि ज्ञाननोऽत्यर्थमहं स च मम प्रियः। 7। 97 ।।

अर्थः– उनमें से नित्य एक भक्तिभाव से लगा हुआ ज्ञानी अति उत्तम है क्योंकि ज्ञानी को मैं अत्यन्त प्रिय हूँ और वह ज्ञानी मुझे अत्यन्त प्रिय है।

भावार्थः– उन चारों प्रकार के अभ्यासियों में भगवान को नित्य एक भक्तिभाव से लगा हुआ ज्ञानी (आत्मज्ञानी) अति उत्तम लगता है, क्योंकि उसके प्रेम से भगवान और भगवान उससे प्रेम से बंधे है।

37

अक्षरं ब्रह्म परम स्वभावोअध्यात्ममुच्यते।
भूतभावोद्भवकरो विसर्गः कर्मसंज्ञितः।। 8।। 3।।

अर्थः– अक्षर ब्रह्म ही परमात्मा है जो (जीवों में) अध्यात्म की तरह जाना जाता है। उससे हट कर भूत भावों के उत्पन्न होने से कर्म बनते है।

भावार्थः– अर्जुन के मूल प्रश्न कि ब्रह्म, आध्यात्म और कर्म क्या हैं का सटीक, संक्षिप्त उत्तर है कि सर्वदा एक रस रहने वाला ओंकार अक्षर ब्रह्म है। वही हर जीव में प्रणव की अखंड गूंज के रूप में आध्यात्म है। उससे चित्त हटने पर ही जीव में भाव उत्पन्न होते हैं और कर्म बनते हैं। यह शब्द ब्रह्म (सुरति) योग की सुंदर व्याख्या है।

38

यं यं वाअपि स्मरन्भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम्।
तं तमेवैति कौन्तेय सदा तडांवभाववितः।। 8 ।।6।

अर्थः– हे कौन्तेय अन्त समय में जो जिस भाव को स्मरण करता हुआ शरीर त्याग करता है, उसको उसी भाव से भावित होने से वैसा ही रूप मिलता है।

भावार्थः– मृत्यु के समय क्या विचार रहता है उसी अनुसार अगला जन्म होता है। यह इस तथ्य की पुष्टि करता है कि आत्मा निर्विकार होने के साथ सूक्ष्म शरीर जिसमें इन्द्रियों, विचार और बुद्धि के संकल्प जुड़े है, भी दूसरे शरीर में जाते हैं।

39

तस्मात्सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर युध्य च।
मध्यर्पितमनो बुद्धिर्मा मे वैष्यस्यसंशयः।। 8।।7।।

अर्थः– इसलिये ''हर समय'' मेरा स्मरण कर और युद्ध भी कर। मुझे अर्पित बुद्धि से निःसंदेह मुझको ही प्राप्त होगा।

भावार्थः– हम जैसा हर समय सोचने का अभ्यास डाल लेते हैं वैसा ही अंतिम समय विचार रहता है। इसीलिये भगवान कहते हैं कि युद्ध (यानी कर्म) भी करो और हर समय मेरा स्मरण करो तो तुम मुझको ही प्राप्त होगे क्योंकि तभी यह आशा की जा सकती है कि अंतिम समय प्रभु की याद रहे।

प्रवचन गुरुदेवः डा. श्रीकृष्ण लालजी महाराज

अभ्यास क्यों किया जाता है

आत्मा के ऊपर दो ग़िलाफ (आवरण) चढ़े हुए हैं। एक माया का और दूसरा अन्तःकरण का – जिसको साधारण भाषा में सब लोग मन कहते हैं। उसी का नाम महापुरुषों ने अन्तःकरण रखा है, जिसके चार हिस्से माने गये हैं और हरेक हिस्से के function (कार्य) के मुताबिक उनके अलग–अलग नाम रखे गये हैं जो हैं– 1. मन, 2. बुद्धि, 3. चित्त, और 4. अहंकार।

जो भाग बाहर से ज्ञान हासिल करता है उसको मन कहते हैं। जो हिस्सा सोच–विचार करता है उसका नाम बुद्धि है। जो हिस्सा discuss करता है (संकल्प विकल्प उठाता है) उसको चित्त कहते हैं और जो हिस्सा record (लेखा जोखा) रखता है, आगे के लिए याद रखता है, मेरे तेरेपने में फँसता है, वह अहंकार कहलाता है। मन का यह मिला–जुला रूप इस मनुष्य शरीर में ही रहता है।

शरीर भी तीन होते हैंः– सबसे पहले स्थूल शरीर जो पाँच तत्वों से बना है– पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश। यह पाँच चीज़ें शरीर को बनाती हैं और क़ायम रखती हैं। जब शरीर निर्जीव हो जाता है तो पाँचों तत्व अपने मूल में समा जाते हैं। उसके बाद मनुष्य का दूसरा शरीर यानी जो आत्मामय मन का है जो मन की अपूर्ण इच्छाओं के कारण कुछ समय के लिए घूमता फिरता है और ऐसे घर में जन्म लेता है जहाँ पर वे इच्छायें पूरी हो सकें। आत्मा जब निर्लेप होती है यानी मन के चक्कर से छूट जाती है तो वही उसका असली रूप या तीसरा शरीर है जो ईश्वर का अंश है। जब तक आत्मा मन के चक्कर में रहती है तब तक मन उससे शक्ति लेकर अपनी ख़्वाहिशें (इच्छायें) पूरी करता है। मन के चंगुल

से छूट जाने के बाद वह अपने मूल यानी असल– ईश्वर में समा जाती है।

अन्तःकरण के चार भागों में एक भाग जो मन है उसके तीन रूप हैंः– 1. तम 2. रज 3. सत्। तम हमें इन्द्रिय भोगों में फँसाता है। यह मन की सबसे निकृष्ट अवस्था है। इसका स्थान मनुष्य की नाभि के ऊपर है, जहाँ घोर अंधकार है। इससे ऊपर sternum (उरोस्थि) के नीचे cordial plexus (हृदय का स्थान) है जहाँ palpitation (धड़कन) होती है, वह रजोगुणी मन का स्थान है। यहाँ संकल्प–विकल्प उठा करते हैं। कभी कोई विचार आया, कभी कोई। कभी एक चीज़ चाहता है और कभी दूसरी। रजोगुणी मन वाला हर वक्त किसी न किसी धुन में लगा रहता है। अगर एक हजार रुपया है तो चाहेगा कि दस–बीस हज़ार और हो जायें, अगर एक मकान मौजूद है तो चाहेगा कि दूसरा और बन जाये। इस तरह जीते जी कुछ ख़्वाहिशें पूरी हो जाती हैं और मरने के बाद जो ख़्वाहिशें बच जाती हैं उनका बंडल बाँधे हुए आत्मा इधर–उधर भटकती फिरती है और ऐसा वातावरण खोजती है जहाँ जन्म लेकर उन ख़्वाहिशों को पूरा किया जा सके।

तीसरा सतोगुणी मन कहलाता है जिसे ब्रह्माण्डी मन भी कहते हैं। इसका स्थान दोनों भौंहों के बीच में एक इंच नीचे की तरफ है, जिसे आज्ञा चक्र कहते हैं। यह आदमी को हमेशा सत् यानी सच्चाई की तरफ ले जाता है।

जब हम जन्म लेते हैं तो हमारी attention (सुरत) senses (इन्द्रियों) के परदे पर जम जाती है और इसी से दुनियाँ में फँसते हैं। जन्मते ही जब आँख खुलती है तो हम देखते हैं– कौन है ? माँ! जिनसे आराम और सुख मिलता है उनसे प्रेम या मुहब्बत करते हैं और जिनसे दुःख मिलता है उनसे नफरत करने लगते हैं। यहीं से मन का काम शुरु हो जाता है

और इसी मुहब्बत और नफरत को लेकर राग और द्वेष का जाल बना लेते हैं। इसी उधेड़बुन या जद्दोजहद (संघर्ष) में जिन्दगी बीत जाती है। इन्द्रियों और मन के चक्कर में उलझे रहकर ही जिन्दगी बिना किसी और मकसद को हासिल किये ख़त्म हो जाती है।

इन्सान में तीन ख़्वाहिशें बड़ी प्रबल होती हैं– 1. हमें पूर्ण सुख मिल जाए 2. हमें पूर्ण ज्ञान मिल जाये 3. हम हमेशा जिन्दा रहें। यह क्यों है ? हमारे अन्दर जो आत्मा है यह तीनों उसी के गुण हैं, जो सत् चित्त आनन्द है। मन का परदा पड़ जाने से अज्ञानवश होकर वह मन के साथ रहने लगी और अपना असली रूप भूल गई। इन तीनों चीजों (सत् चित्त और आनन्द) को आत्मा उन वस्तुओं में ढूँढने लगी जो material (भौतिक) हैं। ऐसा करने में वह दुःख पर दुःख उठाती रहती है क्योंकि जिन चीज़ों में वह सुख तलाश करती है वह चीजें तो नाशवान हैं और हमारी ज़िन्दगी में तबाह (नाश) हो जाती हैं। जब उन चीज़ों को पाते हैं तो ख़ुशी होती है और छूटने और बिछुड़ जाने पर दुःख होता है।

हम भूल जाते हैं कि यह गुण आत्मा के हैं और जब तक आत्मा का असली रूप प्रकट नहीं होगा तब तक उनकी प्राप्ति हमें नहीं हो सकती। जब तक मन का पर्दा मौजूद है तब तक आत्मा का असली रूप और गुण प्रकट नहीं हो पाते। यही भूल है– जहाँ आत्मा है वहीं परमात्मा है, जहाँ सूरज है वहीं किरण है, जहाँ आत्मा बूँद रूप में मौजूद है वहीं ईश्वर सागर रूप में मौजूद है। आत्मा की तलाश कैसी ?

अगर आत्मा न हो तो इस शरीर को कौन क़ायम रखेगा, इसी के द्वारा सब element (तत्व) और सब forces (शक्तियाँ) इस universe (सृष्टि) में काम कर रही हैं। यह ऐसी complicated (गहन, पेचीली) मशीन है कि इसमें कई लाख पुर्जे automatic (स्वतः) काम कर रहे हैं। किस शक्ति से ? जहाँ वह शक्ति हटी वहाँ सब कुछ गायब, कोई वस्तु

क़ायम नहीं रहेगी। आत्मा की या ईश्वर की तलाश कैसी ? वो तो हमारे अन्दर मौजूद है। आत्मा को पाना नहीं है– हमने उसके ऊपर कई पर्दों का ढक्कन रखा है। उसे हटाना अभ्यास है। मन के पर्दों को हटा दो, आत्मा प्रकट हो जायेगी। सूरज चमक रहा है लेकिन बादलों की वजह से हम उसे देख नहीं सकते। बादल हट जायेंगे तो सूरज दिखाई देने लगेगा।

हमारा असली रूप क्या है ? हम आत्मा हैं, हम ईश्वर हैं। हमारे असली रूप पर मन और माया के पर्दे पड़ गये हैं जिनसे वह छिप गया है। अभ्यास यह है कि इन पर्दों को thin (झीना) करते चलो। बादल जितने गहरे होंगे सूरज का प्रकाश उतना ही दबा हुआ होगा। यदि वे झीने होते जायेंगे तो सूरज का प्रकाश उतना ही साफ नज़र आयेगा। इन्द्रियों का दमन करो। मन की वासनाओं को, जिनके बिना काम न चले दिन–ब–दिन झीना करते रहो। तब देखोगे की प्रकाश ही प्रकाश है।

आप स्वयं देख लीजिए कि अगर इच्छाओं को कम करते जायेंगे तो खुशी हासिल होती जायेगी। क्यों ? आत्मा के पर्दे हटते जाते हैं, इसका reflection (प्रतिबिम्ब) आनन्द आपको महसूस होता जायेगा। अभ्यास से संस्कार नहीं खत्म होते, वे तो भोगने ही पड़ेंगे क्योंकि यह प्रकृति माँ का विधान है। लेकिन अभ्यास से अपनी तकलीफों को कम महसूस (अनुभव) करोगे। अभ्यास से अपनी miserable life (दुःखी जीवन) को blissful (आनन्दमय जीवन) बना लोगे। इसलिए अभ्यास करने की जरूरत और अहमियत (महत्व) है।

जाके मन विश्वास है, गुरु सदा हैं संग,
सौ सौ विधि ही जूझिये, तौय न हो मत भंग।

– कबीर

परमसंत डॉ.श्रीकृष्ण लाल जी महाराज के अनमोल वचन

साधन

हर पुरूष में 18 चक्र होते हैं परन्तु ईश्वर की ऐसी मौज है कि स्त्रियों में 12 चक्र होते हैं। इसलिये स्त्री में प्रेम तो होता है परन्तु ज्ञान की कमी के कारण वह ईश्वर स्वरूप कम ही बनती है। भक्ति में वह पुरूषों से आगे रहती है। स्त्री के पश्चात् उसको पुरूष रूप मिलता है। पुरूष रूप वह प्रयत्न करके जन्म व मरण के चक्कर से मुक्त होती है।

❖❖❖❖❖

परमार्थी में स्त्री और पुरूष दोनों के गुण होने चाहिए तभी उसमें पूर्णता आयेगी, भक्ति भी और ज्ञान भी। जहाँ दोनों का संतुलन होगा वहीं पूर्णता होगी। संतुलन का भाव है कि अपनी इन्द्रियों, वृत्तियों और दूसरी शक्तियों पर पूर्ण अधिकार होना चाहिए। ईश्वर में सदैव लय अवस्था में रहना चाहिये और यह अवस्था निरंतर एक रस होनी चाहिए। जो मनुष्य इस अवस्था को प्राप्त करता है उसी का नाम पुरूष है।

❖❖❖❖❖

परमार्थ का भाव है कि मन को जितना भी हो सके माँझना चाहिये। तामसिक तथा राजसिक वृत्ति का त्याग करके सत् वृत्ति को अपनाना चाहिये। सत् वृत्ति के साथ अन्तर में कोमलता तथा सरलता आनी चाहिये। सत्य बोला जाये किन्तु उसके साथ कढ़वी वाणी न हो, उसमें मिठास होनी चाहिये तथा अपनी वाणी से किसी का दिल नहीं दुखाना चाहिये। मनुष्य में दूसरे का दुख देख कर अपने अंतर में दुख उत्पन्न हो और यह भावना आये कि किसी तरह उस दुखी मनुष्य को उसके दुख से निवृत्ति पहुँचाई जाये। किसी को खुश देख कर मन में ईर्ष्या न आये परन्तु स्वयं हर्षित हो। सबकी भलाई में मनुष्य अपनी भलाई समझे। साथ ही साथ उसकी बुद्धि निरंतर ईश्वर का चिंतन करती रहे। जब ऐसी अवस्था परिपक्व हो

जाती है तब परमार्थी वेग से ईश्वर का ओर बढ़ता है और कुछ ही समय में वह आत्मा का साक्षात्कार कर लेता है। जितनी अंतर में पवित्रता, शांति तथा विचार रहित अवस्था आती जायेगी उतना ही मनुष्य आत्मा के समीप आता जायेगा।

❖❖❖❖❖

अपने अंतर में अपनी बुराईयों तथा त्रुटियों का अनुभव करना ''ज्ञान'' कहलाता है। उनको दूर करना ''तप'' कहलाता है।

❖❖❖❖❖

हर परमार्थी को स्वाध्याय करना चाहिए। अपने अंतर में कोई कमज़ोरी देखें तो उसको दृढ़ता से त्यागने का प्रयत्न करना चाहिए, जैसे अधिक बोलना, अधिक खाना, दूसरों की बातों में हस्तक्षेप करना आदि। यह ऐसी बातें हैं कि यदि मनुष्य चाहे तो कुछ समय के प्रयास से इनसे मुक्त हो सकता है। इसके पश्चात जो और अधिक त्रुटियाँ हैं जैसे काम, क्रोध, अहंकार आदि, इनको धीरे–धीरे छोड़ने का प्रयास करना चाहिए। यदि आरम्भ में कठिन त्रुटियों से मुक्त होने का प्रयास किया जायेगा तो परमार्थी को निराशा होगी, क्योंकि काम, क्रोध, अहंकार आदि ऐसी बातें हैं, जिनसे मुक्त होने के लिए काफ़ी समय तक दृढ़ प्रयास की आवश्यकता है। इसलिए आरम्भ में उस त्रुटि से मुक्त होने के लिए प्रयास करना चाहिए जो सरलता से छूट जाये। ऐसा करने से मनुष्य को उत्साह मिलेगा, दृढ़ता आयेगी तथा उसमें कठिन बुराईयों से मुक्त होने के लिए साहस बढ़ेगा।

❖❖❖❖❖

जिस हालत में भी उसने रखा है चाहे वह बुरी है या अच्छी, उसमें खुश रहो। दुःख और सुख की दुनियाँ से ऊँचे उठो। जब तक ज़िन्दगी है दुःख और सुख तो आते ही रहेंगे उनका आना ही ज़रूरी है लेकिन अपने मन को इससे ऊँचा उठाओ और जो खिदमत या फ़र्ज ईश्वर ने सुपुर्द किया

है उसे ईमानदारी और सच्चे दिल से पूरा करो। हर वक्त ख़्याल रखो यह दुनियाँ ईश्वर की है। हम सब ईश्वर के हैं और जो काम हो रहा है और हम कर रहे हैं ईश्वर के लिए कर रहे हैं। हम वहीं से आये हैं, उसी की दुनियाँ में रह रहे हैं और वहीं जाना है।

❖❖❖❖❖

जब दो तारों में गांठ लग जाती है तो वे अलग नहीं हो सकते। उन्हें अलग करने के लिये गांठ खोलनी पड़ेगी। इसी तरह मन और आत्मा में गांठ पड़ गई है। जब यह गांठ छूट जाये तो परमात्मा के दर्शन हों। अज्ञानता ही यह गांठ है।

❖❖❖❖❖

आवागमन से छूटना चाहते हो तो सब ख़्वाहिशों को छोड़ो। अच्छी ख़्वाहिश करोगे, अच्छा मिलेगा, बुरी करोगे बुरा मिलेगा। यहाँ तो हर चीज़ का बदला है। जो दुःख सुख या बीमारी आती है, पिछले कर्मो का नतीज़ा है। यह तो भोगने ही पड़ेंगे, उन्हें अग़र ख़ुशी से भोग लिया जाये तो आगे के संस्कार नहीं बनेंगे। इसलिए सूफियों में राज़ी–ब–रज़ा की शिक्षा दी जाती है। जिस हाल में मालिक ने रखा है उसमें ख़ुश रहो।

❖❖❖❖❖

मान लीजिए कोई बात आपके आचार्य ने आपसे कही या किसी के ज़रिए अपने ख़्याल को ज़ाहिर किया तो अच्छाई इसी में है कि उसे मान लेना चाहिए। अपनी अक़्ल से उसे परखना नहीं चाहिए।

❖❖❖❖❖

मन के बन्धनों को ढीले करते चलो। प्रत्येक वस्तु को परमात्मा की समझो। मोह छूटता जायेगा। जिस हाल में वह रखे उसमें ख़ुश रहो। गुरु के कहने पर चलो और परमात्मा की याद से ग़ाफिल न हो। ईश्वर तुम्हें अपना प्रेम देगा।

प्रवचन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी साहब

नियमित साधना का महत्व

प्रत्येक व्यक्ति के समीप भगवान होते हैं। कहते हैं, हृदय में भगवान हैं। हृदय वह नहीं है जो लोग कहते हैं। शरीर के प्रत्येक अंग में आत्मा की अनुभूति होती है, विश्व के कण–कण में परमात्मा विराजमान हैं, वह सभी परमात्मा का हृदय है। तभी ऋषियों ने, महापुरुषों ने साधना करके शरीर के कुछ ऐसे हिस्से बतायें हैं जो बाकी हिस्सों से अधिक संवेदनशील हैं। वहाँ मन को एकाग्र करके प्रभु की अनुभूति सरलता से हो जाती है। प्रभु इतने समीप होते हुए भी हमें क्यों नहीं दिखते ? पूज्य गुरु महाराज (श्रीकृष्ण लाल जी महाराज) को पाँच छः वर्ष की आयु में कृष्ण भगवान के साकार रूप में स्पष्ट दर्शन होते थे। हमें क्यों नहीं होते हैं।

हमारे भीतर में निर्मलता नहीं है अर्थात् पिछले जन्मों के संस्कारों का कूड़ा करकट भीतर में डालते रहते हैं। आँखों से बुरे दृश्य देखते हैं, कानों से बुराई सुनते हैं, निन्दा सुनते हैं, मुख से कटु वचन बोलते हैं। ये तीन मुख्य इन्द्रियाँ हैं, जिनसे हम भीतर में और अधिक कूड़ा करकट इकठ्ठा करते रहते हैं। पिछले संस्कार तो हैं ही और भी नये पैदा होते रहते हैं। यह आत्मा पर आवरण हो जाते हैं। जैसे मंदिर में जाते हैं। भगवान की मूर्ति के आगे पर्दा लगा होता है तो पुजारी जी से प्रार्थना करते हैं कि पर्दा हटाकर भगवान के दर्शन करा दें। उसी तरह भगवान की मूर्ति तो भीतर में है, पर्दा हमने स्वयं लगा रखा है। और इस पर्दे को क्षण प्रतिक्षण और मज़बूत बनाते चले जाते हैं।

यह पर्दा कैसे टूटे? मनुष्य के हाथ में दो ही साधन हैं। एक प्रेमा–भक्ति का, दूसरा ज्ञान का। ज्ञान के भी दो रूप हैं, एक बुद्धि से

समझना और दूसरा अनुभूति से अनुभव करना। कुछ वेदान्ती ऐसे हैं जो कहते हैं कि सर्वभूतों में परमात्मा सर्वव्यापक है, कण–कण में है, भीतर में भी वही है, बाहर में भी वही है। यह शरीर भी उसका है, मन भी उसका है, बुद्धि भी उसकी है, यह सब कुछ उसी का है। यही उसका विराट रूप है।

जो लोग इस तरह से समझ जाते हैं, उनका कहना है कि अन्य कोई साधना करने की आवश्यकता नहीं। कुछ हद तक यह ठीक है। यदि उपरोक्त बात समझ में आ जाती है, मन स्थिर हो जाता है, कुछ सोचता नहीं, संकल्प–विकल्प नहीं उठाता और इस बात की समझ आ जाती है कि सब कुछ वही है तो उनको कुछ नहीं करना है। प्रमाद, विचार (अच्छे या बुरे) मन में तरंगें उठा करके हमारी दृष्टि में दोष उत्पन्न कर देते हैं। दृष्टि इन स्थूल आँखों की (बाहर की) व दृष्टि मन की भी है, इसलिए हम भेदभाव देखते हैं, अच्छाई बुराई देखते हैं, पाप–पुण्य देखते हैं। उनका कहना है कि यही माया है व माया को उत्पन्न करने वाला अज्ञान है।

इस अज्ञान के कारण ही हमें भेदभाव दिखते हैं, द्वैत दिखता है, मेरा–तेरापन दिखता है। यह ग़लत नहीं है। परन्तु प्रत्येक व्यक्ति न तो इसको भली प्रकार समझ पाता है और न उस बात को पकड़ कर अभ्यास में, व्यवहार में, उतार सकता है। इसलिए ज्ञानियों ने, खासकर महर्षि रमण ने ऐसे वेदान्तियों को सावधान किया है कि जब तक भीतर की अनुभूति न हो तब तक साधन करते रहना चाहिए। यह नहीं है कि हमने समझ लिया कि 'मैं ही ब्रह्म हूँ, मुझसे ही इस सृष्टि की उत्पत्ति है', यह तमाम धन दौलत, सम्मान मेरा ही है और उधर उसी समझ–बूझ में सबका शोषण भी करते जाते हैं। तो यह तो सच्ची समझ–बूझ नहीं आयी। अभी तक 'मैं' यानी अहंकार काम कर रहा है। इसीलिए महर्षि रमण ने सावधान किया है कि जब तक अनुभूति न हो अर्थात् आत्मा के ऊपर के आवरण दूर न हों तथा वह स्थिति निरन्तर न रहे, सहज

अवस्था न हो यानी प्रतिक्षण भगवान के दर्शन न होते हों, तब तक साधना का त्याग नहीं करना चाहिए। वे तो यहाँ तक कह जाते हैं कि यदि सन्यासी के हृदय में एक भी संकल्प रहा तो वह सन्यासी नहीं है, क्योंकि संकल्प उठने से आत्मा व माया के बीच पर्दा आ जाता है। आत्मा व अनात्मिकता के बीच पर्दा आ जाता है। यह साधना जो ज्ञानी लोग हैं, बुद्धिजीवी हैं, जिनकी बहुत तीव्र बुद्धि होती है वे ही कर पाते हैं। इसलिए नींव जो है वो शुद्ध चरित्र की है।

दूसरा रास्ता प्रेम भक्ति का है। उनके यहाँ भी विस्तार है जैसे कि ज्ञान साधना की भी कितनी ही शाखाऐं हैं। भक्ति मुख्यतः नौ प्रकार की है परन्तु इसको और भी फैलाया गया है– विस्तार किया गया है। उस विस्तार में हमें नहीं पड़ना है। ईश्वर कृपा से यदि किसी महापुरुष का संग मिल जाता है और वे अपना लेते हैं, तो उनकी सेवा, उनके साथ प्रेम, जैसा की भगवान कृष्ण ने गोपियों के साथ किया था, उसी प्रकार का यदि हम व्यवहार करें तो सफलता सरलता से मिल सकती है। उससे सरल साधना और कोई नहीं है।

विचार में भी भगवान है, वाणी में भी भगवान है, आँखों में भगवान बसते हैं, कानों में उनकी मधुर बाँसुरी की ध्वनि सुनाई देती है। बुद्धि में भगवान हैं, हृदय में भगवान हैं। ये कैसे डोलते हैं जिसे सूरदास जी ने बताया है। भगवान उँगली छोड़कर तनिक दूर होते हैं तो सुरदास जी क्या कहते हैं– 'कहाँ भागोगे'? ये शारीरिक प्रेम नहीं है, बहुत उच्च कोटि का प्रेम है। भगवान मैंने आपको हृदय में बसा लिया है। हृदय से निकलकर भी कहाँ जाओगे? आप तो मेरे अंग–अंग में ही समाये हुए हैं। ऐसी प्रीत है– तोड़े न टूटे, छोड़े न छूटे। क्या है यह आपकी लीला, पर कहाँ जायेंगे आप? इस साधना के लिए नारद जी के भक्ति सूत्र में जो मुख्य बाते बतलाई हैं वे हैं– सर्वस्य निछावर कर देना। अपनी कोई इच्छा और आशा नहीं रखनी है।

कोई व्यक्ति ऐसा नहीं है जिसे भीतर में कोई इच्छा न हो। कहने में बड़ा सरल दीखता है परन्तु भगवान बुद्ध बनना है। आशा रहित होना है, अमर बनना है–

"राज न चाहो मुक्ति न चाहो, मन प्रीति चरन कमला रे"

अर्थात् मुझे राज नहीं चाहिए, संसार की वस्तुऐं नहीं चाहिए। सबसे उत्तम जो हम मानते हैं वह मुक्ति है, वह भी हम नहीं माँगते हैं भगवान इस धरती की रज चाहिए। मोह न हो, प्रेम न हो अर्थात् भगवान के चरणों के साथ प्रेम हो, संसार की वस्तुओं के साथ नहीं। चिपकाव न हो त्याग की भावना हो।

सिवाय प्रभु के चरणों के अन्य किसी के साथ लगाव नहीं। मेरा मुझमें कुछ नहीं, शरीर तेरा है, मन तेरा है, वस्तुऐं या जो धन है, मेरे पास संतान है, वो सब कुछ तेरा है। यहाँ तक कि मेरा जो भाव है, आचरण, बुराई–भलाई प्रभु यह सब तेरा ही है, मेरा कुछ नहीं। वह यह भी अभिमान नहीं करता है कि मैं शुद्ध कर्म करता रहूँ। यह भी प्रार्थना नहीं करता है कि मेरे कर्म शुद्ध हों। कुछ नहीं, केवल प्रभु के द्वार का कुत्ता बना रहूँ। वह धनी का द्वार नहीं छोड़ता। ऐसी भक्ति चाहता है कि यह द्वार न छूटे। उसे अभिमान नहीं सिर्फ मान है कि प्रभु मेरा है, मेरा वह पति है, मेरा वह पिता है, मेरा वह सर्वस्य है।

अधिकारी बनने के लिए और भी कई बातें हैं। जैसे कुसंग का त्याग करना, बुरे वातावरण का त्याग करना आदि, आवश्यक है। यह अभी तक अपराभक्ति है, संसार की भक्ति है। उधर ब्रज में आकर क्या देखते हैं हम लोग ? भगवान का नाम कम लेते हैं। राधा का ही नाम सबकी जिव्हा पर है। रिक्शा वाले भी जो मुसलमान हैं, वो भी किसी व्यक्ति को हटाना हो तो कहते हैं, 'राधा–राधा'। राधा का नाम यहाँ फैला हैं, क्यों ? भगवान में लय होकर यह भक्ति का अंतिम रूप है। पराभक्ति का रूप है।

कान्ता–भाव, राधा–भाव जीवन का लक्ष्य है– भगवान से एक होकर। सूफी इसको 'हमाओस्त' कहते हैं। 'अहम् ब्रह्मास्मि' में भी वही है। इससे भी ऊपर जाना है ''हमाअज़ोस्त'' अर्थात् मैं उसी से हूँ। तो राधा जी का रूप है, भगवान का रूप भी है और संसार को रास्ता दिखाने के लिए इस पवित्र भूमि में रासलीला करती हैं कि किस प्रकार भगवान बनकर संसार का उद्धार कर रही हैं। किसी भी जिज्ञासु की साधना पूर्ण नहीं होती है जब तक कि वह स्वयं पूर्ण नहीं होकर औरों को भी पूर्ण नहीं बनाता है।

इसीलिए भगवान का नाम लेते हैं पर उतना नहीं जितना यहाँ राधा जी का नाम लिया जाता है। राधे–राधे। वृंदावन में जाकर देखो, वहाँ यही है।

वृंदावन में जहाँ भी जायें वहाँ सब कहते हैं, ''राधे, राधे–राधे। जैसे बच्चा एम. ए. कर लेता है फिर वह औरों को पढ़ाता है। अन्य बच्चे भी धीरे–धीरे एम. ए. कर लेते हैं। इसी तरह इस रास्ते पर प्रभु का रूप होकर संसार की सेवा करते हैं। यह अंतिम चरण है। हम सबको राधा जी से प्रेरणा लेनी है।

किन्तु इस स्थिति तक पहुँचने के लिए नियमित तौर से– और जहाँ तक हो सके निरन्तर ही साधना तो करनी ही होगी।

गुरुदेव सबका कल्याण करें।

चिंतामणी हरि नाम है, सफल करे हरि नाम।
महामंत्र माना यही, सबके दाता राम।।
दुख दरिया है जगत में, सुख सागर है राम।
सुख सागर चल जाइये, 'दादू' तज हर काम।।

रामाश्रम सत्संग (रजि.) गाज़ियाबाद

रजिस्टर्ड ऑफिसः 9–रामाकृष्णा कॉलोनी, जी.टी. रोड, ग़ाज़ियाबाद, उत्तर प्रदेश

डा. शक्ति कुमार सक्सेना — *सर्वोच्च आचार्य एवं अध्यक्ष*

अरविन्द मोहन — *मंत्री*

घोषणाः संस्था की कार्यकारिणी समिति–(2016–2017)

मैं, शक्ति कुमार सक्सेना, पुत्र स्व. श्री कृष्ण सहाय सक्सेना, सर्वोच्च आचार्य एवं अध्यक्ष, रामाश्रम सत्संग (रजि.) ग़ाज़ियाबाद (उ.प्र.) संस्था की वर्तमान कार्यकारिणी भंग करता हूँ। वर्ष 2016–2017 के लिए संस्था के विधान की धारा 10(ग) में प्रदत्त अधिकारों के तहत नवीन कार्यकारिणी समिति,पदाधिकारी एवं सदस्यों की निम्नवत् घोषणा करता हूँ, जो विधान की धारा 9(ग) के अनुरूप एक वर्ष हेतु वैध रहेगी :–

क्र.	पद	नाम	पता	व्यवसाय
1.	अध्यक्ष	डॉ. शक्ति कुमार सक्सेना	एस ए 36, शास्त्रीनगर, ग़ाज़ियाबाद	डाक्टर
2.	मंत्री	श्री अरविन्द मोहन	2बी, नीलगिरी–।।।, सेक्टर–34, नौएडा	सर्विस
3.	कोषाध्यक्ष	श्री ईश्वर स्वरूप सक्सेना	के. एम. –144 ए कविनगर, ग़ाज़ियाबाद	सेवानिवृत्त
4.	सदस्य	श्री भजन शंकर	कोठी नं. 84/14, दिल्ली रोड, गुड़गाँव	सेवानिवृत्त
5.	सदस्य	कैप्टन के.सी. खन्ना	आर –11/182, राजनगर, न्यू ग़ाजियाबाद	सेवानिवृत्त
6.	सदस्य	श्री उमाकांत प्रसाद	207, संयम प्रतीक अपार्टमेन्ट, खाजपुरा, पटना	सेवानिवृत्त

7. सदस्य	डॉ. दिनेश कुमार श्रीवास्तव	छावनी मौ. वार्ड नं.– 4 पो. बा. भभुआ, जिला कैमूर	सेवानिवृत्त
8. सदस्य	डॉ. मुद्रिका प्रसाद	साकेतपुरी, मुजफ़्फरपुर बिहार	सेवानिवृत्त
9. सदस्य	श्री रमेश चन्द्र जौहरी	सिन्ध का बाड़ा, जनक गंज, ग्वालियर	सेवानिवृत्त
10. सदस्य	श्री. आर. पी शिरोमणी	मूलचन्द मार्किट शमशाबाद रोड, आगरा	सेवानिवृत्त
11. सदस्य	श्री प्रियासरन	105–हिमालय टॉवर अहिंसा रवण्ड–2, इन्द्रापुरम, गाजियाबाद	सेवानिवृत्त
12. सदस्य	श्री अनिल कुमार	6, चेतना समिति ए. जी. कालोनी, पटना	सर्विस
13. सदस्य	श्री विष्णु शर्मा	आर–27, नारायणा विहार गोपालपुरा, जयपुर	सर्विस
14. सदस्य	प्रो. आर. के. सक्सेना	33–देशबन्धु सोसाईटी आई.पी. एक्सटेंशन नई दिल्ली	सर्विस

(ह0)
डॉ. शक्ति कुमार सक्सेना
अध्यक्ष एवं आचार्य
रामाश्रम सत्संग (रजिस्टर्ड) ग़ाजियाबाद

दिनांक 09–10–2016

प्रतिलिपि–मंत्री, रामाश्रम सत्संग रजि. को निर्देशित करते हुए कि इस सूची को राम सन्देश के आगामी अंक में प्रकाशित करने की व्यवस्था करें।

रामाश्रम सत्संग (रजि.) गाज़ियाबाद

रजिस्टर्ड ऑफिसः 9–रामाकृष्णा कॉलोनी, जी.टी.रोड, ग़ाज़ियाबाद, उत्तर प्रदेश

डा. शक्ति कुमार सक्सेना 36, शास्त्री नगर

सर्वोच्च आचार्य एवं अध्यक्ष ग़ाज़ियाबाद

घोषणा

मैं डॉ. शक्ति कुमार सक्सेना पुत्र स्व. श्री कृष्ण सहाय सक्सेना, सर्वोच्च आचार्य एवं अध्यक्ष रामाश्रम सत्संग (रजि.) गाज़ियाबाद, एतद् द्वारा शिक्षक वर्ग, रामाश्रम सत्संग (रजि.) ग़ाज़ियाबाद की परिवर्द्धित सूची सर्वसाधारण हेतु निम्न प्रकार से जारी करता हूँ ।

पूज्य गुरुदेव द्वारा जो इज़ाज़तें जारी की जा चुकी हैं वह पूर्ववत् रहेंगी। नए भाईयों, जिनकी नियुक्ति की गई है, उनके नाम व गुरुदेव द्वारा पूर्व में घोषित नाम नीचे प्रकाशित किये जा रहें हैं।:–

इज़ाज़त बैत शर्तिया (आचार्य पदवी प्रतिबंधित) क्र. 3ए :–

1. श्री भजन शंकर, गुड़गाँवा

इज़ाज़त बैत शर्तिया (आचार्य पदवी प्रतिबंधित) क्र. 3 :–

1. श्री रामसागर लाल, गोरखपुर
2. श्री उमाकान्त प्रसाद, पटना
3. श्री दिनेश कुमार श्रीवास्तव, भभुआ
4. श्री कृष्ण चन्द्र खन्ना, ग़ाज़ियाबाद

उपरोक्त में से किसी को भी इज़ाज़त देने का अधिकार नहीं होगा।

इज़ाज़त तालीम (शिक्षक) क्र. 2:–

1. डॉ. मुद्रिका प्रसाद, मुज़फ्फरपुर
2. श्री गिरिजानन्द लाल, बक्सर
3. श्री रमेश चन्द्र जौहरी, ग्वालियर
4. श्री आर. पी. शिरोमणी, आगरा
5. श्री अशोक प्रधान, नई दिल्ली
6. श्री विष्णु शर्मा, जयपुर
7. श्री भुवनेश्वर नाथ वर्मा, भभुआ
8. श्री हरबंस लाल भायला, झुन्झुनू
9. श्री महेश चन्द्र कुलश्रेष्ठ, रेवाड़ी
10. डॉ. राजेश चन्द्र वर्मा, आरा
11. श्री पारसमणी ठाकुर, देवघर
12. श्री मोहन सहाय श्रीवास्तव,वाराणसी
13. डॉ. सुधीर कुमार, मोतीहारी
14. प्रो. आदर्श किशोर सक्सेना, ग्वालियर
15. श्री आदर्श कुमार सक्सेना, वाराणसी
16. श्री रामवृक्ष सिंह, चकिया
17. श्री छैल बिहारी श्रीवास्तव, कानपुर
18. श्री नारायण द्विवेदी, इन्दरगढ़

19. श्री ओ पी एम तिवारी, बेंगलूरू 20. श्री जयशंकर नाथ त्रिपाठी, कुशीनगर

उपरोक्त में से किसी को भी बैत करने का अधिकार नहीं होगा।

इज़ाज़त मॉनीटर (सत्संग कराने की) क्र. 1:–

1. श्री हरि शंकर तिवारी, सासाराम
2. श्री गौड़ चन्द्र घोष, भागलपुर
3. श्री रमेश प्रसाद सिन्हा, मुजफ्फरपुर
4. श्री जगजीवन पंडित, बरगनिया
5. श्रीमती आभा सिंह, बोकारो
6. श्री जटाशंकर लाल, गया
7. श्री जे. सी. पी. सिन्हा, जमशेदपुर
8. श्री अवध बिहारी सिन्हा, सासाराम
9. श्री अरविन्द कुमार, वाराणसी
10. श्री प्यारे मोहन, बक्सर
11. श्री महेश प्रसाद वर्मा, सीतामढ़ी
12. श्री कन्हैया पाल, हाजीपुर
13. श्री कामेश्वर प्रसाद चौधरी, दरभंगा
14. श्री राजेश कुमार सिंह, मुंगेर
15. श्री बिनोद कुमार, गोपालगंज
16. श्री भीम प्रसाद बरनवाल, झाझा
17. श्री एस. पी. श्रीवास्तव, मुगलसराय
18. श्री राजेन्द्र सिन्हा, लखनऊ
19. श्री रमेश चन्द्रा, लखनऊ
20. श्री हरपाल सिंह, एटा
21. श्री विनीत मिश्रा, अलवर
22. श्री राकेश कुमार श्रीवास्तव, चंडीगढ़
23. श्री सतीश कुमार, समस्तीपुर
24. श्री केदार राय, मधुबनी
25. श्री सुनील कुमार, पटना
26. श्री बी सी महरोत्रा, राँची
27. श्री हरीश रोहिल्ला, झुंझुंनू

उपरोक्त सज्जनों को इज़ाज़त दी जाती है कि वे केवल भाइयों को एकत्र करके सत्संग करा सकेंगे। उन्हें या नये भाइयों को तालीम (शिक्षा) देने या बैत (दीक्षा) देने की इजाज़त नहीं है।

उपरोक्त घोषित इजाज़तें आगामी घोषणा होने तक जारी रहेंगी और यदि इनके अतिरिक्त किसी के पास कोई और किसी भी प्रकार की इजाज़त है तो वह स्वतः ही प्रभावहीन हो जाती है।

(ह0)
डॉ. शक्ति कुमार सक्सेना
अध्यक्ष एवं आचार्य
रामाश्रम सत्संग (रजिस्टर्ड) ग़ाजियाबाद

दिनांक 09–10–2016

प्रतिलिपि – मंत्री, रामाश्रम सत्संग रजि. को निर्देशित करते हुए कि इस सूची को राम सन्देश के आगामी अंक में प्रकाशित करने की व्यवस्था करें।

प्राचीन मुस्लिम संतों के जीवन चरित्र

अहमद हर्व्व

तपस्वी अहमद हर्व्व नशापुर के वासी थे। उनके बारे में इयहा ने एक बार कहा था– ''मेरी मृत्यु के समय मेरा मस्तक अहमद हर्व्व के चरणों में नत हो, ऐसी मेरी इच्छा है।''

धर्मपरायण अहमद हर्व्व निरंतर 'सुभानअल्लाह' का जाप करते रहते थे। एक बार हजामत बनवाते समय नाई ने उन्हें ओंठ हिलाने से रोकने के लिए निवेदन किया। इस पर वे बोले– ''ओंठ अपना काम करते हैं, तू अपना काम कर।''

एक बार उनके एक मित्र ने उन्हें पत्र लिखा जिसमें उनके पत्र न आने का उलाहना था। नमाज पढ़ते समय उन्हें उस पत्र की याद आई और उन्हें अनुभव हुआ कि ऐसा पत्र व्यवहार का सम्बन्ध भी प्रभु के मार्ग में विध्न उपस्थित कर सकता है। इसलिए उन्होंने अपने मित्र को लिखा–''मेहरबानी करके आगे से पत्र न लिखना, कारण ईश्वर स्मरण को छोड़कर पत्र लिखने का अवकाश मैं नहीं पा सकता। मेरी इच्छा है तुम भी ईश्वर भजन ही में लीन रहो।''

अहमद की माता एक दिन भोजन बनाकर उनके पास लाईं और बोलीं– ''बेटा, यह भोजन अपने घर का है इसलिए बिना संदेह इसे खा लेना।''

अहमद– ''नहीं माँ, अपने अन्न में पड़ोसी का अन्न भी मैंने मिलते देखा था। उस पड़ोसी का अन्न पाप की कमाई का है। इस भोजन को खाने में मुझे बहुत संकोच होगा।''

उन्हीं के नाम का एक व्यापारी नशापुर में था जो गले तक संसार की मोह माया में फँसा था। महात्मा अहमद भगवान में इतने लीन थे तो व्यापारी अहमद अपने धन में। एक बार की बात है रुपया पैसा

गिनते–गिनते उसने अपनी सेविका को भोजन का थाल लाने का आदेश दिया। नौकरानी थाल लेकर आई, पर वह तो रुपया गिनने ही में मशगूल रहा। नौकरानी थाल लेकर लौट गई। मालिक ने उसे फिर आवाज दी। वह फिर आई, पर धन से उसका ध्यान भोजन की ओर नहीं खिंचा। बार–बार ऐसा हुआ, आखिर मालिक का ध्यान आकर्षित करने के लिए नौकरानी ने उसके ओठों पर भोज्य पदार्थ लगा दिया। थोड़ी देर बाद अन्न के स्वाद से उसे चेत हुआ तो उसने समझा मैं भोजन कर चुका। मुँह धोकर वह फिर हिसाब–किताब में लग गया।

एक बार नशापुर के कई प्रतिष्ठित सज्जन महात्मा अहमद के यहाँ मिलने आये। महात्मा का एक उद्दण्ड दुराचारी पुत्र था। उस समय वह सुरापान करके घर से गाता–गाता बाहर निकला, पर उन आगत सज्जनों की ओर जरा भी आदर नहीं दिखाया, जिससे उन्हें आश्चर्य हुआ। उनका आशय ताड़ कर महात्मा बोले– ''एक रात्री को पड़ोसी के यहाँ से मिठाई आई। हम दोनों स्त्री–पुरुष ने उसे खाया। खाने के बाद मालुम हुआ कि वह मिठाई राजा के यहाँ की थी। उसी रात को इस बालक ने गर्भवास किया था। राजा के रजोगुणी अन्न से इसकी उत्पत्ति हुई है, इसलिए यह इतना दुराचारी है।

महात्मा अहमद का बहराम नाम का एक पड़ोसी था। लाखों का माल वह परदेश में व्यापार के लिए भेजता। एक बार उसका सामान लुटेरों ने लूट लिया। यह बात सुनकर अपने मित्रों के साथ महात्मा अहमद भी आश्वासन देने के लिए गये। बहुत ही सम्मानपूर्वक उनका स्वागत करके उसने सबके भोजन की व्यवस्था की। उन दिनों अकाल था, उसने समझा यह महात्मा भी दूसरों के साथ भोजन पाने की आशा से आया होगा।

महात्मा अहमद बोले– ''भाई, मेरे भोजन की चिंता मत कर, मैं खाने नहीं, पर तेरे खोये धन के लिए आश्वासन देने आया हूँ।''

बहराम बोला– ''हाँ, हुआ तो ऐसा ही है। पर मुझे उसका दुःख नहीं है। मैं तो इसके लिए भगवान का उपकार ही मानता हूँ, क्योंकि मेरा धन

भले ही दूसरे लूट कर ले गये हों पर मैंने किसी का धन नहीं लूटा। दूसरे लुटेरे मेरा आधा ही धन ले गये हैं। आधा तो बाकी है। तीसरे सांसारिक अनित्य धन ही लूटा गया है, धर्म रूपी सच्चा धन तो रह गया है न!''

यह बात सुनकर महात्मा बहुत प्रसन्न हुये और अपने साथियों से बोले– ''सुनो इनकी बातों में कितना सच्चा धर्म–प्रेम समाया है।''

महात्मा अहमद रात को प्रभु स्मरण किया करते थे। एक बार उनके एक शिष्य ने उनसे बीच–बीच में एक आध रात सो लेने की प्रार्थना की। उत्तर में उन्होने कहा– ''जिस आदमी के नीचे नरक की अग्नि प्रज्वलित हो और ऊपर स्वर्ग का राज्य जिसे बुला रहा हो, वह नींद में समय कैसे गँवाये।''

उपदेश वचन

1. मेरा बस चले तो मैं अपने निन्दकों को खूब इनाम दूँ। क्योंकि उनकी निंदा और द्वेष से तो मेरा हित साधन नही होता है।
2. प्रभु को सदा सर्वत्र उपस्थित समझकर यथाशक्ति उसका ध्यान–भजन और आज्ञापालन करते रहना। इस मायावी संसार ने आज तक असंख्य जनों का संहार किया है, उसी प्रकार तुम्हारा भी विनाश न हो जाये इसका ध्यान रखना।

दीन ही तो भगवान को सबसे प्यारे हैं। बिना दीन–हीन बने कोई प्रभु को प्राप्त नहीं कर सकता। जिन्हें अपने शुभ कर्मों का अभिमान है या उग्र साधनों का भरोसा है वे प्रभु के महती कृपा के अधिकारी कभी नहीं हो सकते। प्रभु तो अकिंचन प्रिय हैं, निष्कंचन बनने पर ही उनकी कृपा की उपलब्धि हो सकती है।

– चैतन्य महाप्रभु

प्रेरक प्रसंग

सबसे बड़े जादूगर का करतब

प्राचीनकाल की बात है, एक नगर में एक वणिक रहता था। वणिक बड़ा ईश्वर भक्त और ईमानदार था। उसका ईश्वर में दृढ़ विश्वास था। वह ईश्वर के भरोसे पर ही अपना सारा कामकाज करता था। उसने अपना सारा जीवन ही ईश्वर को सौंप दिया था।

वणिक की अनाज की दुकान थी पर वह दुकान में बैठता नहीं था। अपने घर में ही प्रभु के ध्यान में ही मस्त रहता था। जब भी किसी को अनाज खरीदना होता था, वह वणिक के पास जाता था। वणिक उसे दुकान की चाबी दे देता था और कहता था–'जाओ भईया, दुकान खोलकर आवश्यकता अनुसार अनाज तौल लो और मूल्य मेरी गद्दी पर रख दो। फिर दुकान बंद करके चाबी मुझे दे जाना।' ग्राहक वणिक के आदेशानुसार ही कार्य किया करते थे। उसकी दुकान इसी प्रकार चलती और नगर में सबकी लोकप्रिय हो गई।

एक बार एक प्रतिद्वन्दी महाजन को भी अनाज की आवश्यकता हुई और वह उसकी बढ़ाई से जलता था, सो वणिक को नुकसान भी पहुँचाना चाहता था। उसने वणिक के पास जाकर कहा– 'सेठ जी, मुझे दस धड़ी गेहूँ चाहिए'। सेठ ने अपने नियम के अनुसार प्रतिद्वन्दी महाजन को भी दुकान की चाबी देकर कहा– 'जाइये दुकान खोलकर दस धड़ी गेहूँ तोलकर ले लीजिए और मूल्य मेरी गद्दी पर रखकर चाबी मुझे दे जाइये।' प्रतिद्व न्दी महाजन जब दुकान खोलकर गेहूँ तोलने लगा तो उसके मन में लोभ और बेईमानी जाग उठी। उसने सोचा सेठ तो यहाँ बैठा है नहीं फिर क्यों न अधिक गेहूँ तोल लिया जाए और मूल्य कम रख दिया जाए ? लोभ के वशीभूत होकर उसने दस धड़ी गेहूँ तोले, पर मूल्य केवल छः धड़ी का ही

रखा। महाजन बड़ा प्रसन्न हुआ। सेठ को चाबी देकर, गेहूँ लेकर अपने घर चला गया।

महाजन ने घर जाकर पुनः गेहूँ देखा तो कम लगा, फिर से तोल की। आश्चर्य, गेहूँ तोल में केवल छः धड़ी ही निकला। छः धड़ी से रत्ती भर भी गेहूँ अधिक नहीं हुआ। उसने सोचा, अवश्य तोलने में भूल हो गई है। महाजन पुनः वणिक के पास गया। उसने वणिक से कहा– 'सेठ जी तोल में मुझसे भूल हो गई है मैंने दाम तो अधिक दे दिए, पर चार धड़ी गेहूँ कम लिया है।' वणिक बोल उठा– 'तो क्या हुआ ? दुकान आपकी है, जाइए, चार धड़ी गेहूँ फिर तोल कर ले लीजिए।' वणिक ने फिर दुकान की चाबी महाजन को दे दी। उसने फिर दुकान खोलकर चार धड़ी गेहूँ बड़ी होशियारी से तोले। महाजन फिर वणिक को ताली देकर गेहूँ लेकर अपने घर गया। उसने घर जाकर फिर सारे गेहूँ की तोल की। आश्चर्य, फिर गेहूँ तोल में छः धड़ी ही निकला।

महाजन आश्चर्य में डूब गया। वह सोचने लगा, यह कैसी अद्‌भुत बात है। मैंने दो बार दस–दस धड़ी गेहूँ तोले, पर दोनों बार घर पर तोल करने पर गेहूँ छः धड़ी ही निकला। सेठ कोई जादू तो नहीं जानता है ? अवश्य उसके पास कोई चमत्कारिक शक्ति है। नहीं तो कोई दुकानदार किसी ग्राहक को दुकान की चाबी सौंपकर कहीं कहता है कि, जाओ आवश्यकता अनुसार चीज़ ले लो और दाम गद्‌दी पर रख दो। महाजन के हृदय के तार झंझना उठे। वह वणिक के पास जाकर बोला– 'सेठ जी आप कोई जादू तो नहीं जानते हैं ?' वणिक ने आश्चर्य भरे स्वर में पूछा– 'क्यों क्या बात है ? आपके मन में यह विचार कैसे उत्पन्न हुआ, कि मैं कोई जादू जानता हूँ ?'

महाजन ने पूरी कहानी सुना दी। उसने कहा– 'मैंने लोभ के वशीभूत होकर दो बार दस धड़ी गेहूँ तोले, पर दाम छः धड़ी के ही रखे थे। दोनों बार जब घर जाकर गेहूँ की तोल की, तो गेहूँ केवल छः धड़ी ही निकला।

यह जादू नहीं तो और क्या है ?' वणिक की आँखें आनन्द से सजल हो उठीं। उसने कहा– 'महाजन भाई, मैं जादू नहीं जानता। मैं तो एक साधारण दुकानदार हूँ। मैं अपना सारा कामकाज भगवान के भरोसे और विश्वास पर करता हूँ। उन्ही के ऊपर दुकान छोड़ दी है। आपने गेहूँ तो दस धड़ी लिए पर दाम छः धड़ी के ही दिए। आपने भगवान के साथ छल किया। भगवान ने भी आपक गेहूँ को तोल में कम कर दिया। भगवान ने ही आपको यह शिक्षा दी है कि अधिक सामान लेकर कम दाम नहीं देना चाहिए। उन्होंने ने ही आपके साथ जादू का खेल किया है। भगवान ही सबसे बड़े जादूगर हैं।

गुरु नानक की व्यवहारिक शिक्षा

गुरु नानक देव जी धर्म प्रचार करते हुए लाहौर पहुँचे तथा नगर सेठ की ऊँची हवेली को देखकर रुक गये। नगर के लोगों से पूछने पर पता चला कि सेठ जी जितने धनवान हैं, उतने कंजूस भी हैं। कुछ दिन बाद गुरुजी नगर सेठ की हवेली में गये। सेठ जी ने गुरु नानक देव जी का स्वागत सत्कार किया। चलते समय उन्होंने नगर सेठ को एक सुई देते हुए कहा– ''सेठजी मेरी इस सुई को आप अपने पास रख लें। मैं स्वर्ग में इसे ले लूँगा।'' हक्के–बक्के सेठजी ने गुरु जी से कहा– ''मैं इसे अपने पास रख सकता हूँ मगर मरने पर तो कुछ भी साथ नहीं जा सकता। मैं आपकी सुई कैसे साथ ले जा सकता हूँ।'' मुस्कुराते हुए नानक जी ने कहा– ''जिस तरह आप लोगों को सताकर धन का संग्रह कर रहे हैं, दान धर्म नहीं कर रहे हैं, पैसे में आपकी रुचि देखकर मैं समझा कि आप इस धन को साथ ले जाने वाले हैं।'' यह सुनते ही सेठजी ने गुरुजी के पाँव पकड़ लिए और भविष्य में धन के सदुपयोग की प्रतिज्ञा की। ऐसी थी गुरु नानकदेव जी की व्यवहारिक शिक्षा।

राम संदेश के नियम

1. आध्यात्मिक विद्या के गुप्त और अनुभवी रहस्यों तथा सदाचार-शिक्षा को सरल भाषा में जनता तक पहुँचाना हमारी राम सन्देश पत्रिका का मुख्य उद्देश्य है।
2. राम-सन्देश में आत्मिक, नैतिक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक उन्नति के लेख ही छपते हैं, राजनैतिक या रोमांचक लेख नहीं। रचनाओं में काट-छाँट करने अथवा छापने या न छापने की स्वतंत्रता सम्पादक को है।
3. राम सन्देश का वर्ष जनवरी में आरम्भ होता है। वार्षिक चन्दा 20 (बीस) रुपये है। एक वर्ष से कम तथा आजीवन ग्राहक नहीं बनाये जाते। चन्दा दशहरा भंडारों में या मैनेजर, राम संदेश को, 9-रामाकृष्णा कॉलोनी, जी. टी. रोड, ग़ाजियाबाद (उ.प्र.) 201009 के पते पर दिसम्बर के अंत तक अवश्य भिजवा दें।
4. राम सन्देश डाक द्वारा नहीं भेजा जाता है। इसका वितरण भंडारों पर ही किया जाता है। कृपया अपनी प्रति लेना न भूलें।

राम संदेश

रजि. ऑफिस

9 – रामाकृष्णा कॉलोनी, जी.टी. रोड,
गाज़ियाबाद – 201009

मुद्रक, प्रकाशक व संपादक : डॉ. शक्ति कुमार सक्सेना

मुद्रण : अंकोर पब्लिशर्स (प्रा.) लिमिटेड, बी-66, सैक्टर-6, नोएडा-201301